एम. एस. सुब्बालक्ष्मी

एम.एस. सुब्बालक्ष्मी

एम.एस. सुब्बालक्ष्मी

'कर्नाटक संगीत की कोकिला' कही जानेवाली मदुरै षण्मुगावडिवु सुब्बालक्ष्मी का जन्म 16 सितंबर, 1916 को मदुरै (तमिलनाडु) के एक गरीब देवदासी परिवार में हुआ था। उनके पिता का नाम श्री सुब्रह्मण्य अय्यर तथा माता का नाम श्रीमती षण्मुगावडिवु था।

इस प्रकार सुब्बालक्ष्मी के नाम में उनके जन्म-स्थान और माँ दोनों के नाम जुड़ गए। पहला शब्द जन्म-स्थान सूचक है और दूसरा शब्द उनकी माँ का परिचायक। घर में उन्हें सब 'कुंजम्मा' कहते थे। संगीत की दुनिया में वह 'एम.एस.' के नाम से ही प्रसिद्ध थीं।

सुब्बालक्ष्मी को संगीत विरासत में मिला था। उनकी दादी अक्कामिल वायलिन और माँ वीणा बजाने में प्रवीण थीं। घर में संगीत के वातावरण ने सुब्बालक्ष्मी पर गहरा प्रभाव डाला और बचपन में ही वह कर्नाटक संगीत से जुड़ गईं।

घर में सुब्बालक्ष्मी का एक भाई शक्तिवेल तथा बहन वाडिवंबल भी थी। भाई-बहन के बीच आनंद पाने का अच्छा साधन संगीत ही था। जब वे इकट्ठा होते तो वाडिवंबल वीणा और शक्ति मृदंग बजाते तथा सुब्बालक्ष्मी सुरों की तान छेड़तीं।

सुब्बालक्ष्मी को संगीत की प्रारंभिक शिक्षा अपनी माँ से मिली। माँ ने ही उन्हें सुरों का ज्ञान कराया। किंतु संगीत के सुरों के साथ-साथ स्कूली शिक्षा भी जरूरी थी। अत: अन्य बच्चों के समान उन्हें भी स्कूल भेजा गया।

एक दिन सुब्बालक्ष्मी को बलगम की शिकायत हुई। इसी बात पर अध्यापिका ने उनकी पिटाई कर दी। उस दिन के बाद वह कभी पढ़ने के लिए विद्यालय नहीं गईं। उन दिनों उनके घर एक भिक्षुक तीर्थयात्री अकसर आता था। उसने सुब्बालक्ष्मी को संस्कृत पढ़ाने का जिम्मा ले लिया। सुब्बालक्ष्मी अपनी माँ के साथ मंदिरों में जाती थीं और वहाँ संगीत में उनका साथ देती थीं। वह अधिकांश समय संगीत का अभ्यास करती थीं, जिससे उनमें सुरों के उतार-चढ़ाव और रागों को पहचानने की समझ विकसित हुई। संगीत के अलावा उन्हें कुछ न सूझता। तंबूरे जैसे वाद्य यंत्र का संगीत उन्हें हर्ष व उन्माद से भर देता और वह उसमें खो जातीं।

सुब्बालक्ष्मी के घर में रेडियो नहीं था, इसलिए पड़ोसी के रेडियो पर बजते गीत-संगीत के साथ सुर मिलाकर गाया करती थीं। धीरे-धीरे वह संगीत में रमती चली गईं और संगीत उनके लिए साँस लेने की तरह हो गया।

सुब्बालक्ष्मी का परिवार मीनाक्षी मंदिर के समीप ही रहता था, जहाँ संगीत के विभिन्न गुरु अपने संगीत का जादू

बिखेरते थे। यहाँ सिम्मनगुड़ी सीताराम, मदुरै श्रीनिवास आयंगर, आर्यकुंडी रामानुज आयंगर व मायावरम वी.वी. कृष्णा अय्यर आदि संगीतज्ञों के सुर सुनकर ही सुब्बालक्ष्मी ने अपनी संगीत–साधना की। उन सभी ने इनकी कला को मुक्त कंठ से सराहा।

सुब्बालक्ष्मी प्राय: आठ वर्ष की उम्र से ही कागज को माइक की तरह गोल बनाकर घंटों गाने का अभ्यास किया करती थीं। दस वर्ष की उम्र तक वह कर्नाटक शास्त्रीय संगीत में दक्षता हासिल करने लगी थीं। जब वह दस वर्ष की थीं तो उनकी माँ ने मद्रास में कोलंबिया ग्रामोफोन कंपनी के लिए 78 आर.पी.एम. पर गाना रिकॉर्ड किया।

माँ ने सुब्बालक्ष्मी का भी गाना रिकॉर्ड करवाना चाहा, किंतु कंपनीवालों ने इनकार कर दिया। फिर बाद में कुछ सोचकर कंपनी ने सुब्बालक्ष्मी से भी अपनी कला दिखाने के लिए कहा। 'मरकमवडिवु', 'ओथूकुजियिनिल' आदि दुरूह गीतों को भी सहजता से गाकर उन्होंने अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन किया। इस रिकॉर्ड से ही मद्रास में पहली बार सुब्बालक्ष्मी की पहचान बनी।

सुब्बालक्ष्मी ने तेरह वर्ष की उम्र में पहली बार मंच पर कदम रखा। तब वह डरी–सहमी सी, बेमेल कपड़े पहने, नकली रत्न और काँच की चूडियाँ पहने हुई थीं। उन्होंने दर्शकों की ओर विस्मय से देखा। किसी ने उनकी ओर ध्यान नहीं दिया; किंतु जब उन्होंने अपनी मधुर और सुरीली आवाज में गाया तो सुननेवाले हतप्रभ रह गए।

शो के बाद बड़े–बड़े संगीतज्ञों ने सुब्बालक्ष्मी की मुक्त कंठ से प्रशंसा की। सुर–ताल के प्रसिद्ध गुरु दक्षिणामूर्ति पिल्लै ने उन्हें विवाह आदि अवसरों पर गाने का सुझाव दिया। सुब्बालक्ष्मी इस सुझाव पर अमल करने लगीं। उन्होंने विवाह आदि अवसरों पर गाना शुरू कर दिया। पंद्रह–सोलह वर्ष की उम्र में उन्होंने एक विवाह में दो घंटे तक गाया और सभी लोग सम्मोहित होकर उन्हें सुनते रहे।

सन् 1932 में सुब्बालक्ष्मी संगीत–प्रेमियों की चहेती बनने लगी थीं। 1 जनवरी, 1932 को एक समारोह में जब विद्वान् अरियक्कुंडी आयंगार नहीं पहुँच सके तो वहाँ सुब्बालक्ष्मी ने अपने संगीत का जादू बिखेरा और लोगों को उनकी कमी महसूस नहीं होने दी।

सुब्बालक्ष्मी ने गुरु सिम्मनगुडी श्रीनिवास अय्यर से संगीत की शिक्षा ली। उनके सान्निध्य में राग और लय को बारीकी से समझा।

मद्रास उन दिनों कर्नाटक संगीत की राजधानी बन चुका था। कैरियर की खातिर सुब्बालक्ष्मी सन् 1932 में अपनी

माँ के साथ मद्रास गईं। वह उनके जीवन का महत्त्वपूर्ण वर्ष था, क्योंकि उन दिनों संगीत की दुनिया पुरुष-प्रधान थी। इसके बावजूद वहाँ सुब्बालक्ष्मी का सुनहरा सपना पूरा हो गया।

सन् 1933 में फिल्म निर्देशक के. सुब्रह्मण्यम ने कुंभकोणम में सुब्बालक्ष्मी का एक कार्यक्रम आयोजित किया। वहाँ उनका संगीत सुनने के लिए लोगों की भीड़ उमड़ पड़ी। वहाँ मिली अपार सफलता के बाद उन्हें मद्रास की संगीत अकादमी में भी संगीत समारोह करने का अवसर मिला।

सत्रह वर्ष की उम्र में ही सुब्बालक्ष्मी ने कर्नाटक संगीत के मक्का कहे जानेवाले इस स्थान में गाया और अपूर्व सफलता प्राप्त की। यहाँ संगीत समारोह करना हर शास्त्रीय गायक का सपना माना जाता है। उस समय की 'आनंद विकतन' आदि पत्रिकाओं ने उनके समारोह की समीक्षा नियमित रूप से छापी। प्रेस की नियमित प्रशंसा उन्हें मिलती रही। तभी प्रेस ने उन्हें 'कोकिला' के उपनाम से विभूषित किया।

उन्हीं दिनों सुब्बालक्ष्मी की मुलाकात युवा कलाकारों के फोटो सेशन के दौरान टी. सदाशिवम से हुई। वह तमिल पत्रिका 'आनंद विकतन' के मार्केटिंग विभाग से जुड़े थे, साथ ही वह मद्रास कांग्रेस सर्कल के एक सक्रिय कार्यकर्ता भी थे। सी. राजगोपालाचारी से उनके अच्छे संपर्क थे। दोनों ने पहली ही नजर में एक-दूसरे को पसंद कर लिया।

हालाँकि सदाशिवम की पहली पत्नी का देहांत हो चुका था और राधा व विजया नामक उनकी दो बेटियाँ भी थीं, किंतु सदाशिवम के साथ सुब्बालक्ष्मी ने उन्हें (दोनों बेटियों को) भी स्वीकार कर लिया। अंततः सुब्बालक्ष्मी ने 10 जुलाई, 1940 को तिरुनीरमलाई में सदाशिवम से प्रेम-विवाह कर लिया।

विवाह के बाद सदाशिवम ने सुब्बालक्ष्मी के कैरियर को एक नया रूप और सफलता की नई ऊँचाई दी। सदाशिवम के परिवार में दो बेटियों के अलावा एक अनाथ भतीजा तथा बूढ़ी दादी भी थीं। साथ ही सदाशिवम आर्थिक तौर पर अपने दूसरे रिश्तेदारों की भी मदद किया करते थे।

इस प्रकार सुब्बालक्ष्मी को एक भरा-पूरा परिवार मिला। वह उन्हें भरपूर प्यार करतीं, उन्हें अपना अपनत्व देतीं। गरमियों की चाँदनी रात में सभी बच्चे मकान की छत पर सुब्बालक्ष्मी के इर्द-गिर्द सोया करते थे। बड़ी बेटी राधा से तो उन्हें विशेष लगाव हो गया था। राधा सुब्बालक्ष्मी को घर के अलावा रियाज व बाकी कार्यों में भी सहयोग करती थी। बूढ़ी दादी का मन भी सुब्बालक्ष्मी ने सहज ही जीत लिया था।

मद्रास सुब्बालक्ष्मी के लिए भाग्यशाली साबित हुआ। वहाँ से संगीत के क्षेत्र में उन्हें पहचान मिली, एक मार्गदर्शक व आदर्श पति मिला।

विवाह से पूर्व सन् 1938 में ही फिल्मों में वे भी अपने कदम बढ़ा चुकी थीं। उनकी पहली फिल्म 'सेवासदनम्' थी, जिसमें उन्होंने एक गरीब लड़की की भूमिका निभाई थी, जो एक अमीर आदमी से विवाह कर लेती है। इस फिल्म की सफलता के बाद उन्होंने सन् 1940 में 'शकुंतलई' में शकुंतला की मुख्य भूमिका निभाई। इस फिल्म में उनके नायक थे— प्रसिद्ध अभिनेता जी.एन. बालासुब्रह्मण्यम।

इस बीच उनके पति की नौकरी छूट गई और घर का खर्च चलाना कठिन लगने लगा। ऐसे में सुब्बालक्ष्मी ने उनका हौसला बढ़ाया, ''हम दोनों मिलकर महीने में सौ रुपए तो कमा ही सकते हैं।'' उन दिनों सौ रुपए का बहुत महत्त्व था। सदाशिवम ऐसी हिम्मतवाली पत्नी पाकर निहाल हो गए।

सदाशिवम ने देशभक्ति के गीत व भजन गाने की प्रेरणा सुब्बालक्ष्मी को दी। साथ ही लोक-कल्याण के लिए अपनी कला को प्रयोग करने का सुझाव भी दिया। सुब्बालक्ष्मी उनके इन विचारों से काफी प्रभावित हुईं। सदाशिवम स्वतंत्रता-आंदोलन के संदर्भ में समय-समय पर गांधी, नेहरू व अन्य नेताओं से मिलते रहते थे।

सन् 1941 में सुब्बालक्ष्मी को गांधीजी से मिलवाने के लिए वर्धा आश्रम ले गए। गांधीजी के कानों तक उनकी लोकप्रियता पहले ही पहुँच चुकी थी। वहाँ सुब्बालक्ष्मी के भजनों ने गांधीजी को आत्मविभोर कर दिया। तीन वर्षों के बाद कस्तूरबा मेमोरियल ट्रस्ट के लिए फंड इकट्ठा करने के उद्देश्य से सुब्बालक्ष्मी ने पाँच संगीत समारोह किए। इसी वर्ष उन्हें 'ईसाईमणि' नामक अवॉर्ड से सम्मानित भी किया गया।

इसी दौरान सुब्बालक्ष्मी के पति को अपनी एक पत्रिका प्रारंभ करने का विचार सूझा। सुब्बालक्ष्मी भी उनके विचार से सहमत थीं; किंतु पत्रिका के लिए पर्याहश्वत धन का अभाव था। ऐसे में सुब्बालक्ष्मी ने 'सावित्री' नामक फिल्म में नारद की भूमिका निभाई। एक नारी होते हुए भी उन्होंने पुरुष की भूमिका को जीवंत कर दिया था। यह फिल्म, जिसकी अभिनेत्री शांता आहश्वटे थीं, बॉक्स ऑफिस पर अत्यंत सफल रही। इस फिल्म से प्राप्त धन से सुब्बालक्ष्मी की पत्रिका 'कालकी' का प्रकाशन संभव हुआ। इस पत्रिका ने सुब्बालक्ष्मी को 'संत संगीतज्ञ' के रूप में स्थापित करने में प्रमुख भूमिका निभाई। आज यह पत्रिका दक्षिण भारत की श्रेष्ठ तमिल पत्रिकाओं में गिनी जाती

है।

सन् 1945 तक फिल्म जगत् में सुब्बालक्ष्मी ग्लैमर क्वीन के रूप में छाई रहीं। उस वर्ष उनकी एक अन्य फिल्म 'भक्त मीरा' प्रदर्शित हुई। तमिल और हिंदी में एक साथ रिलीज हुई इस फिल्म में उन्होंने राजस्थानी संत कवयित्री मीराबाई की भूमिका निभाई। इस फिल्म की सफलता से वह पूरे भारत में एक भक्ति संगीतज्ञ के रूप में विख्यात हो गईं।

सन् 1947 में इस फिल्म को हिंदी में पुन: निर्मित किया गया। फिल्म को राष्ट्रीय स्तर पर मिली बड़ी सफलता के बावजूद सुब्बालक्ष्मी ने अपने फिल्मी कैरियर को अलविदा कह दिया और पूरी तरह संगीत को समर्पित हो गईं।

सुब्बालक्ष्मी ने शास्त्रीय संगीत, भक्ति-संगीत, लोक-संगीत, हिंदी भजन, मराठी के अभंग तथा देशभक्ति के गीतों पर भी अच्छी पकड़ बना ली। वह संगीत के तकनीकी पक्ष का भी गहरा ज्ञान रखती थीं। दक्षिण भारतीय संगीत के साथ-साथ उत्तर भारतीय संगीत पर उनकी पकड़ होने से उन्हें यहाँ भी लोकप्रियता मिली।

सुब्बालक्ष्मी ने तमिल, तेलुगु, मलयालम, संस्कृत व हिंदी सीखने के लिए भी कड़ी मेहनत की थी। इसके अलावा वह उत्तर भारत की भाषाओं को भी सीखने लगी थीं। संगीत के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण योगदान करने के कारण सन् 1954 में भारत सरकार द्वारा उन्हें 'पद्मभूषण' की उपाधि से विभूषित किया गया।

सुब्बालक्ष्मी की कला के कारण ही सन् 1966 में उन्हें संयुक्त राष्ट्र में संगीत समारोह हेतु आमंत्रित किया गया। उनके गायन ने वहाँ कई देशों के राष्ट्राध्यक्षों को अभिभूत कर दिया। इससे पूर्व उन्होंने सन् 1963 में एडिनबर्ग समारोह (इंटरनेशनल फेस्टिवल ऑफ आर्टिस्ट) में अपने संगीत का जादू बिखेरा था।

सुब्बालक्ष्मी को सन् 1968 में चेन्नई की संगीत अकादमी ने 'संगीत कलानिधि' सम्मान से विभूषित किया। यह सम्मान प्राप्त करनेवाली वह पहली महिला थीं। इस सम्मान ने उन्हें संगीत विभूति बना दिया।

सुब्बालक्ष्मी ने कड़ी मेहनत से उत्तर भारतीय भाषाएँ भी सीख ली थीं और वह इनमें भजन भी गाने लगी थीं। जब वह कालकी गार्डन में रहती थीं तो महान् गायिका सिद्धेश्वरी देवी ने छह महीने के अपने प्रवास काल में उन्हें भजन, ठुमरी और छोटे खयाल गाने की शिक्षा दी थी।

बाद में सुब्बालक्ष्मी ने बँगला भजन व रवींद्र संगीत भी सीखा। बहुत कम लोग जानते हैं कि वह भरतनाट्यम नृत्य

की भी जानकार थीं। मृदंग तथा अन्य वाद्य यंत्र बजाना भी वह जानती थीं।

फिलिपींस की राजधानी मनीला के आमंत्रण पर 31 अगस्त, 1974 को सुब्बालक्ष्मी वहाँ पहुँचीं। संगीत के क्षेत्र में विशिष्ट उपलब्धियों के लिए वहाँ उन्हें 'रैमन मैग्सेसे' पुरस्कार से सम्मानित किया गया। उन्होंने अवॉर्ड में प्राप्त धन का एक-तिहाई भाग कल्याणकारी संस्थाओं को दान-स्वरूप दे दिया।

सन् 1975 में भारत सरकार ने सुब्बालक्ष्मी को 'पद्मविभूषण' की उपाधि से सम्मानित किया। उसी वर्ष उन्हें नेपाल में डॉ. टी.एम.ए. पई के अस्सीवें जन्म-दिवस पर आमंत्रित समारोह में किया गया। वहाँ सुब्बालक्ष्मी ने के.एम.सी. अस्पताल के लिए धन इकट्ठा करने के उद्देश्य से संगीत समारोह किया। संगीत समारोह के अंत में उन्हें 'एकेडमी ऑफ जनरल एजुकेशन फेलोशिप' देकर सम्मानित किया गया।

भरपूर प्रसिद्धि मिलने के बावजूद घमंड उन्हें छू भी नहीं पाया था। वह सभी की भावनाओं का आदर करती थीं। सत्तर वर्ष की उम्र में एक बार वह तमिलनाडु के तंजावूर जिले के अय्यालुर नामक स्थान पर संगीत प्रस्तुत कर रही थीं। उनका संगीत सुनने के लिए वहाँ से 30 मील दूर से एक दंपती भी आए थे, किंतु वे उनका गीत समाहश्वत होने के बाद ही वहाँ पहुँच पाए।

उस समय काफी रात हो चुकी थी। जब सुब्बालक्ष्मी उनकी व्यथा से अवगत हुईं तो उन्होंने हँसते हुए कहा, ''कोई बात नहीं, मैं आपके लिए फिर से गा देती हूँ।'' उन्होंने उस दंपती के लिए लगातार ढाई घंटे तक गायन किया।

सुब्बालक्ष्मी का संगीत राष्ट्रीय एकता का प्रतीक माना जाता था। संगीत में उनकी उपलब्धि के लिए उन्हें सन् 1988 में 'कालिदास सम्मान' तथा 'इंदिरा गांधी अवॉर्ड फॉर नेशनल इंटीग्रेशन' सम्मान देकर सम्मानित किया गया।

सुब्बालक्ष्मी की प्रतिभा के कारण ही प्रसिद्ध व्यक्तियों ने उन्हें कई उपनाम दे दिए थे। पं. जवाहरलाल नेहरू उन्हें 'संगीत-सम्राज्ञी' और पटियाला निवासी बड़े गुलाम अली उन्हें 'सुस्वरलक्ष्मी' कहते थे।

सुब्बालक्ष्मी को कई संस्थाओं ने अपना फेलो भी बनाया। 'इंटरनेशनल म्यूजिक काउंसिल' द्वारा उन्हें 'राष्ट्रीय प्रोफेसर' (मेंबर डी ऑनर) नियुक्त किया गया। दूरदर्शन तथा आकाशवाणी ने उन्हें अपना 'एमिरेट्स प्रोड्यूसर' नियुक्त किया। देश के एक प्रसिद्ध संस्थान 'इंदिरा गांधी नेशनल सेंटर फॉर आर्ट' की ट्रस्टी मनोनीत की गईं।

देश के विभिन्न विश्वविद्यालयों द्वारा उन्हें 'डॉक्टर ऑफ लेटर्स' की मानद उपाधि से सम्मानित किया गया। सन् 1971 में वेंकटेश्वर विश्वविद्यालय, 1973 में दिल्ली विश्वविद्यालय, 1980 में बनारस हिंदू विश्वविद्यालय तथा 1987 में मद्रास विश्वविद्यालय ने उन्हें सम्मानित किया। शांति निकेतन ने उन्हें 'देसीहाथामा' उपाधि (डॉक्टोरल डिग्री) देकर उनका मान बढ़ाया।

केडयानाल्लुर वेंकटरमन सुब्बालक्ष्मी के अंतिम पच्चीस वर्षों में उनके जीवन तथा संगीत से संबंधित सभी क्रियाकलापों की देख-रेख करते रहे। इस दौरान सुब्बालक्ष्मी ने कई धुनों को संगीतबद्ध किया, जो तिरुपति देव-स्थापना द्वारा उसे प्रचार-स्वरूप प्रदान की गई थीं।

सुब्बालक्ष्मी के पति इस दौरान सामाजिक व राजनीतिक क्रियाकलाप छोड़कर 'कालकी' पत्रिका के प्रति पूरी तरह समर्पित हो चुके थे। सन् 1999 में उनकी मृत्यु ने सुब्बालक्ष्मी को आहत कर दिया। उनका मन संगीत से उचट सा गया।

इसके बाद उन्होंने राष्ट्रपति भवन में एक कार्यक्रम के अलावा कोई सार्वजनिक कार्यक्रम नहीं किया। संगीत-सेवा के प्रति उनके समर्पण के कारण सन् 1998 में उन्हें देश के सर्वोच्च नागरिक सम्मान 'भारत रत्न' से सम्मानित किया गया। किंतु उन्हें इस बात का दु:ख था कि यह सम्मान ग्रहण करते समय उनके पति इस दुनिया में नहीं थे। यह सम्मान पानेवाली वह पहली कर्नाटक संगीत गायिका थीं।

सन् 2003 में मद्रास म्यूजिक एकेडमी के ह्श्वलैटिनम जुबली समारोह में उन्हें राष्ट्रपति ए.पी.जे. अब्दुल कलाम द्वारा सम्मानित किया जाना था; किंतु वह नहीं आ सकीं। तब राष्ट्रपति ने स्वयं उनके घर जाकर उन्हें 'स्पेशल ज्यूरी अवॉर्ड' प्रदान किया।

सुब्बालक्ष्मी संगीत की सेवा करते–करते इतनी खो गई थीं कि उन्हें अपने बिगड़ते स्वास्थ्य का ध्यान ही नहीं रहा। पिछले चार दशकों से वह मधुमेह से पीड़ित थीं। इसके अलावा वह वायरल संक्रमण व न्यूमोनिया से भी ग्रसित हो चली थीं। बाद में उन्हें हाइपर ग्लाइसेमिया की भी शिकायत होने लगी थी। इन बीमारियों से जूझते हुए उन्होंने चेन्नई के सेंट इसाबेल अस्पताल में 11 दिसंबर, 2004 को अपने प्राण त्याग दिए। तब उनकी आयु 88 वर्ष थी। चँूकि उनके अपनी कोई संतान नहीं थी, इसलिए उनके पति के भाई के पौत्र कालकी मुरली ने चेन्नई के वसंत नगर स्थित विद्युत् शवदाह गृह में उनका अंतिम संस्कार किया। कर्नाटक संगीत की इस कोकिला को तमिलनाडु पुलिस ने इक्कीस गोलियाँ दागकर राजकीय सलामी दी।

❑❑❑